International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182 Print ISSN: 2349-5979
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 2; February 2016; Page No. 258-259

भारतीय राज्य व्यवस्था में केन्द्र–राज्य सम्बन्ध : एक परिचय

डॉ. रोहित कुमार
सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानंद विश्वविद्यालय, सागर (म0प्र0)

सारांशः– भारतीय संधवाद संविधान सभा में केन्द्रीय शक्ति समिति के प्रतिवेदन के प्रस्तुतिकरण के समय से ही एक गहन अध्ययन एवं गंभीर विवाद का विषय रहा है। संविधान सभा के सदस्यों एवं राजनैतिक पंडितो के मध्य इस बात को लेकर पारस्परिक मतभेद रहा कि भारतीय व्यवस्था क्या वास्तव में संघीय है, अर्द्ध संघीय है या एकात्मक। इसमें कुछ संघीय प्रवृत्तियाँ हैं। यह भी एक विवाद का विषय रहा है कि भारत में संघीय व्यवस्था अपनाये जाने की आवश्यकता ही क्या है। जबकि इस व्यवस्था में एकलवादी संहसंघवादी एकीकीकरण एवं अत्याधिक केन्द्रीयकृत व्यवस्था को अपनाया गया है। वस्तुतः जब भारत ने स्वतंत्रता प्राप्त की थी और संविधान निर्माण का कार्य प्रारंभ किया था तो उस समय विश्व में उदारवादी चिंतक विद्यमान थे। इस परिपेक्ष में भारत द्वारा लोकतंत्र एवं संघवाद का प्रयोग एक महत्वपूर्ण शैक्षणिक विषय बन गया था किन्तु भारतीय व्यवस्था का सार तत्व उसके भू–राजनैतिक परिस्थितियों पर आधारित है। संघवाद में केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों के संबंधों की एक विषेश प्रणाली होती है। यह अतः सम्बन्ध सामायिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। विश्व के सभी संघात्मक संविधान द्वारा स्थापित मौलिक व्यवस्था में परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ नये स्वरूप सामने आये है। इसी प्रकार भारतीय संबैधानिक व्यवस्था में भी कई परिवर्तन तथा नये समीकरण सामने उभर कर आये हैं।

प्रस्तावनाः– केन्द्र या संघ और राज्यों में शक्तियों का विभाजन संघवाद का एक आवश्यक लक्षण है, प्रत्येक सरकार अपने क्षेत्र चाहे केन्द्र में हो या राज्य में स्वतंत्र एवं सर्वोच्च होती है और वह एक दूसरे के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेत नहीं कर सकती है। यह संघवाद का सैद्धान्तिक रूप है किन्तु व्यवहार में इसका प्रयोग प्रत्येक देश अपनी विशिष्ट परिस्थितियों के अनुरूप करता है। अमेरिका और आस्ट्रेलिया दोनों देशों के संविधान में प्रारम्भ में संधवाद का सैद्धान्तिक रूप में कठोरता से पालन किया गया था और केन्द्र की शक्तियाँ परिभाषित थीं तथा राज्यों को अवशिष्ट शक्तियाँ प्रदान की गई थीं। परिणामतः केन्द्र राज्यों की अपेक्षा कमजोर था किन्तु बाद में इन देशों में कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं विशेष रूप से दोनों महायुद्ध जिसके फलस्वरूप धीरे–धीरे केन्द्र की शक्तियाँ बढ़ती गई और आज इन देशों में भी राज्यों की अपेक्षा केन्द्र अधिक शक्तिशाली बन गया है।[1] इन देशों की घटनाओं से अनुभव प्राप्त करके कनाडा ने जो केन्द्र और राज्य के वीच शक्ति विभाजन की योजना अपनायी थी इससे उसने केन्द्र को सशक्त रखा और अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र को प्रदान की। हमारे संविधान निर्माता अपने देश की परिस्थितियों के अनुसार और इन देशों में हुए परिवर्तनों से प्राप्त अनुभवों के आधार पर एक सशक्त केन्द्र की स्थापना को व्यवहारतः उचित समझा और केन्द्र को सशक्त बनाया ताकि देश की एकता एवं अखण्डता को बनाएं रखते हुए देश की आर्थिक प्रगति सुनिश्चित की जा सके।[2] इस प्रकार हमारे संविधान में संघवाद को भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल लागू करके संविधान निर्माताओं ने एक नया स्वरूप प्रदान किया जोकि केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन में स्पष्ट दिखायी देता है।

1. विधायी सम्बन्ध – संघ (केन्द्र) और राज्य सरकारों के वैधानिक संबन्धों का विवरण संविधान के ग्यारहवें भाग के पहले अध्याय में किया गया है। विधायी सम्बन्धों को अच्छे से समझाने हेतु संविधान में तीन सूचियों की व्यवस्था की गयी है।

(i) संघ–सूची – संघ सूची में 97 विषय शामिल किये गये है। इसमें रक्षा विदेशी मामले, व्यापार, मुद्रा, विदेशी विनिमय, डाक, तार, रेलवे बीमा, इत्यादि राष्ट्रीय महत्व के विषयों को स्थान दिया गया है। राष्ट्रीय महत्व के विषयों के सम्बन्ध में बनने बाले कानूनों में एकरूपता होना आवश्यक है इसलिए इन विषयों पर कानून बनाने का अधिकार केवल संसद को ही दिया गया है।[3]

(ii) राज्य सूची– राज्य सूची में मूल संविधान के अनुसार 66 विषय थे लेकिन 42 वे संविधान संशोधन 1976 से ये घटकर 62 रह गये हैं। इस सूची में पुलिस न्याय, कृषि, सिंचाई, सड़के, सार्वजनिक स्वास्थ्य, स्थानीय स्वशासन आदि क्षेत्रीय महत्व के विषयों को स्थान दिया गया है। 42 वें संशोधन से शिक्षा, वन जंगली, जानवरों एवं पक्षियों की रक्षा तथा नाप–तौल राज्य सूची से निकालकर समवर्ती सूची में शामिल कर दिये गये हैं। क्षेत्रीय महत्त्व के विषय होने के कारण राज्य सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार राज्य व्यवस्थापिका को प्राप्त है।[4]

(iii) समवर्ती सूची– समवर्ती सूची में 52 विषय शामिल किये गये हैं। इस सूची में दण्ड–विधान, समाचार पत्र, प्रेस, श्रम, विवाह, तलाक आदि विषयों को स्थान दिया गया है। इन विषयों के सम्बन्ध में कानून में एकरूपता उपयोगी तो है किन्तु आवश्यक नही, अतः संसद एवं राज्य विधानमण्डल दोनों ही इनके सन्दर्भ में कानून बना सकते हैं परन्तु संसद एवं राज्य व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये कानूनों में विरोधाभास होने पर संसद द्वारा बनाये गये कानून को लागू किया जाता है और राज्य विधानमण्डल के कानून को रद्द कर दिया जाता है।[5]

अवशिष्ट शक्तियाँ – संविधान के अनुच्छेद 248 के अनुसार समवर्ती सूची तथा राज्य सूची में उल्लेख न किये गये विषयों पर संसद (संघ) को कानून बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त है। ऐसी शक्तियों को अवशिष्ट शक्तियाँ कहा जाता है।[6]

राष्ट्रीय हित में राज्य–सूची के विषयों पर संसद की कानून बनाने की शक्ति :– राज्य सूची में दिये गये विषयों पर कानून बनाने की अनन्य शक्ति राज्य विधानमण्डल को प्राप्त है लेकिन निम्नलिखित दशाओं में संसद को भी उन पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है।

(i) राष्ट्रीय हित के किसी विषय पर।

(ii) आपातकाल अवस्था में।

(iii) राज्यों के द्वारा इच्छा प्रकट करने पर।
(iv) अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों को लागू करने के लिए।
(v) संघ तथा राज्य के कानून में विरोध होने पर।
(vi) राज्य में संवैधानिक व्यवस्था भंग होने पर।
(vii) कुछ विधेयकों को प्रस्तावित करने के लिए केन्द्र का अनुमोदन आवश्यक होने पर।

2. प्रशासनिक सम्बन्ध– संघ (केन्द्र) सरकार तथा राज्य सरकारों के प्रशासनिक सम्बन्धों का उल्लेख संविधान के ग्यारहवें भाग की धारा 256 से 263 तक दिया गया है। भारतीय संविधान द्वारा संघ तथा राज्यों की विधि–निर्माण शक्तियों का वर्णन तो कर दिया गया है किन्तु वह प्रदेश जिसमें कि संघीय कानून लागू किया जाता है राज्यों में बॅटा हुआ है क्योंकि संघीय कानूनों को राज्य प्रदेशों में ही लागू किया जायेगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि संघ सरकार को अपने कानूनों को लागू करने के लिए पर्याप्त मात्रा में प्रशासकीय तथा कार्यपालिका शक्तियाँ प्राप्त हों जिसके लिए संविधान में कुछ व्यवस्थाएँ की गयी है।[7]
(i) राज्यों का दायित्व।
(ii) केन्द्र सरकार राज्यों को निर्देश दे सकती है।
(iii) केन्द्र राज्यों की सरकारों का उपयोग अपने एजेन्ट के रूप में कर सकता है।
(iv) सरकारी कृत्यों, अभिलेखों और न्यायिक कार्यवाही को पूरी मान्यता दी जायेगी।
(v) दो या अधिक राज्यों में बहने वाले जलाशयों व नदियों के जल का बंटवारा।
(vi) अखिल भारतीय सेवाएँ।
(vii) राज्यपाल की नियुक्ति।

3. वित्तीय सम्बन्ध :– भारत में केन्द्र और राज्यों के वित्तीय सम्बन्ध मुख्यतः सन 1935 के भारत सरकार अधिनियम के आधार पर निर्मित किये गये है। वित्तीय साधनों का अर्थ है कि केन्द्र और राज्यों के पास राजस्व की शक्ति का होना है। संविधान में वित्तीय साधनो का बॅटवारा संघ और राज्यों में निम्न प्रकार से किया गया है।[8]
(i) संघ (केन्द्र) द्वारा लगाये जाने और राज्यों द्वारा इकटठा करने की कर व्यवस्था।
(ii) संघ द्वारा लगाये और वसूलने के पश्चात राज्यों को प्रदान करने की कर व्यवस्था।
(iii) संघ द्वारा लगाये जाने एवं वसूलने के पश्चात राज्यों का उसमे भागीदार होने की कर व्यवस्था।
(iv) केन्द्र द्वारा राज्यों को अनुदान।
(v) राज्यों के द्वारा केन्द्र से उधार लेने की व्यवस्था।

केन्द्र और राज्यों के मध्य वित्तीय अधिकारो को लेकर टकराव की स्थिति को रोकने के लिए उनके मद भी निर्धारित किये गये है।
केन्द्र सरकार को थल, जल तथा नभ सेना, संघीय ऋण पर ब्याज, डाकखाना, तारघर, और टेलीफोन, शासन सम्बधी व्यय, पेन्शन, ऋण का भुगतान, राज्यों की आर्थिक सहायता, विकास की योजनाओं, रेल इत्यादि पर व्यय करने का दायित्व संविधान द्वारा दिया गया है। इसी प्रकार राज्य सरकार को आरक्षी विभाग तथा कारावास, राज्य के सार्वजनिक ऋण पर ब्याज, शिक्षा का प्रसार, कृषि की उन्नति, सार्वजनिक स्वास्थ्य की रक्षा, स्थानीय स्वराज्य, और अस्पतालों पर व्यय करने का दायित्व सौंपा गया है।

4. न्यायिक सम्बन्ध – भारत में उच्चतम न्यायालय राज्य के संघात्मक स्वरूप की रक्षा करता है। साथ ही अन्तर्राज्यीय विवाद के निपटारे एवं केन्द्र राज्य सम्बन्धों के निर्धारण में निष्पक्ष एवं शक्तिशाली भूमिका निभाता है। इसी एकीकृत न्याय व्यवस्था के कारण भारत में न्यायिक एकता को जन्म मिला और इसे बनाये रखने को संविधान में निम्नलिखित प्रावधान किये गये है।[9]
(i) राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाती है।
(ii) राज्यों के उच्च न्यायालयों के निर्णयों के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकती है।
(iii) राज्यों के आपसी झगड़ो का निपटारा उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाता है।
(iv) उच्चतम न्यायालय के निर्णय उदाहरण के रूप में राज्य न्यायालयों द्वारा प्रयोग में लाये जाते हैं।
(v) उच्चतम न्यायालय समय–समय पर राज्य के उच्च न्यायालयों को न्याय सम्बंधी निर्देश दे सकता है।
(vi) उच्चतम न्यायालय के निर्देशों को लागू करना राज्य अधिकारियों का कर्तव्य है।

केन्द्र राज्य सम्बन्धों को मूल्यांकन :– केन्द्र और राज्य के विधायी, प्रशासकीय वित्तीय तथा न्यायिक क्षेत्र के सम्बन्धों के उल्लेख से यह स्पष्ट है कि भारत में राज्यों की अपेक्षा संघ (केन्द्र) को बहुत अधिक शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं तथा राज्यों की स्थिति संघ की तुलना में बहुत दुर्बल है। राष्ट्रपति द्वारा आपातकाल की घोषणा किये जाने पर राज्यों की स्वायत्तता को स्थगित करने की व्यवस्था इसी का एक प्रमाण है। जिसके आधार पर हम कह सकते है कि भारतीय संविधान का ढांचा संघात्मक है लेकिन इसकी आत्मा एकात्मक है।

संदर्भ

1. पाण्डेय, डॉ. जयनारायण – भारत का संविधान पृ. 464
2. बसु. डी.डी.– भारत का संविधान एक परिचय पृ. 281
3. शर्मा रामअवतार व यादव सुषमा–केन्द्र राज्य संम्बन्ध पृ. 8
4. बसु. डी.डी. – भारत का संविधान एकपरिचय पृ. 283
5. फड़िया व जैन – भारतीय शासन व राजनीति पृ. 123–124
6. शर्मा रामअवतार व यादव सुषमा – केन्द्र राज्य सम्बन्ध– पृ. 11
7. सिंहल डॉ. सुरेशचन्द्र – भारतीय शासन एवं राजनीति – पृ. 226–228
8. सिंहल डॉ. सुरेश चन्द्र – भारतीय शासन एवं राजनीति पृ. 230–231
9. सिंहल डॉ. सुरेश चन्द्र – भारतीय शासन एवं राजनीति पृ. 233